विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK-64

वर्ष १० • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२४ • आषाढ पूर्णिमा [शक] • दि. २८-६-१९८० • अंक १

सुखी गृहस्थ

(ग)

चार परिषद थीं भगवानके अनुयायियोंकी जो कि "परीसानं चतस्सन्नं" कहलाती थीं। (भिक्षु संघ, भिक्षुणी संघ, गृही उपासक संघ और उपासिका संघ) भगवान समय-समय पर इन चारोंको धर्ममार्गका उपदेश देते थे। धर्मसाधनाका अभ्यास कराते थे। मार्ग सबके लिए एक ही था -- आर्य आष्टांगिक मार्ग। आठ अंगोंवाला वह मार्ग जिसपर चलकर चारों परिषदका कोई भी सदस्य शील, समाधि और प्रज्ञामें प्रतिष्ठित होता हुआ आर्य बन सके। साधना भी सबके लिए एक ही। "चत्तारो सति पट्ठानो" (कायानुपश्यना वेदनानुपश्यना, चित्तानुपश्यना और धर्मानुपश्यना) जिसे उन्होने दुःख-विमुक्तिके लिए और निर्वाण प्राप्त करनेके लिए "एकायनो मग्गो" याने एकमात्र मार्ग कहा। अतः इन चारोंमेंसे चाहे जिस परिषदका व्यक्ति हो, मार्गदर्शनका मूल आधार तो "अरिओ अट्ठंगिको मग्गो" एवं "चत्तारो सतिपट्ठानो मग्गो" ही होता था। परन्तु फिर भी चारोंके जीवन जगतकी परिस्थितिया भिन्न-भिन्न होनेके कारण समय-समय पर चारोंके लिए अलग-अलग व्यावहारिक उपदेश भी दिए। आचार-संहिता भी अलग-अलग बनी।

गृहस्थके लिए मात्र पाँच शील पालन करने अनिवार्य हैं जबकि गृहत्यागीके लिए २०० से भी अधिक। गृहस्थके लिए नितांत अपरिग्रही होना अनावश्यक है परन्तु गृहत्यागीके लिए अत्यंत अनिवार्य। गृहस्थके लिए कंगाली कलंक है, अवांछनीय है। उसे भार बनकर किसी पर आश्रित होना भी अत्यंत अशोभनीय है। उसकेलिए स्वावलंबन ही शोभनीय है। गृहस्थ ईमानदारीके साथ कड़ी मेहनत करके धनोपार्जन करे। अपनी और राष्ट्रकी संपदा बढ़ाए, खुशहाली बढ़ाए। भुखमरी गृही-धर्म नहीं है। किसी भूखे गृहस्थको भगवानके पास धर्म सीखनेकी लिए लाया गया तो भगवानने आदेश दिया कि इसे पहले भरपेट भोजन कराओ। भुखमरे व्यक्तिमें और इसी प्रकार भुखमरे समाजमें धर्म प्रतिष्ठित नहीं हो सकता। इसीलिए उनकी मंगल कामना रही ---

"देवो वस्सतु कालेन सस्स संपत्ति हेतु च।
फीतो भवतु लोको च, राजा भवतु धम्मिको॥

याने वर्षा समय पर हो। शस्य संपदा बढ़े। लोकमें समृद्धि फैले धर्मके आधार पर। समाज धर्मनिष्ठ हो; जिसके लिए यह आवश्यक है कि शासक धर्मनिष्ठ हो। शासककी अच्छाई-बुराईका प्रभाव जनता पर पड़े बिना नहीं रहता।

इसीलिए गृहस्थको उपदेश देते हुए उन्होंने कहा -- कि वह धन-उपार्जन करे परन्तु अपने परिश्रम-पराक्रमसे; ईमानदारीपूर्वक, न्याय-नीतिपूर्वक, धर्मपूर्वक, बिना किसीको धोखा दिए। अपनी मेहनत और ईमानदारीसे कमाई हुई लोकीय संपदाका होना गृहस्थके लिए लोकीय सुखका कारण बनता है। यह किसी भी गृहस्थका पहला लोकीय सुख है। जो व्यक्ति लोकीय संपदा हासिल करता है, जिसके उपार्जनमें उसने कभी कोई श्रम नहीं किया अथवा जिसे उसने अनीतिपूर्ण ढंगसे हासिल किया तो वह संपदा उसके सही सुखका कारण नहीं बन सकती। ऐसा व्यक्ति गृहस्थके इस प्रथम सुखसे वंचित रह जाता है।

गृहस्थकी दूसरी सुख-संपदा है -- अपनी मेहनत और ईमानदारीसे कमाई हुई संपदाका उचित उपभोग और संविभाजन याने दान द्वारा सदुपयोग। यदि कोई गृहस्थ अपनी कमाई संपदाका लोभ और कंजूसीवश कोई उपभोग नहीं करता -- न अपने लिए, न औरोंके लिए तो ऐसा व्यक्ति सद्गृहस्थके दूसरे सुखसे वंचित

धम्म वाणी

आनण्थ सुखं लत्वान, अथो अत्थि सुखं परं।
भुञ्जं भोगसुखं मच्चो, ततो पञ्ञा विपस्सति॥
विपस्समानो जानाति, उभो भोगे सुमेधसो!
अनवज्ज सुखस्सेतं, कलं नाग्घति सोळसिं॥

अंगुत्तर निकाय-४/७/२

समझदार साधक उऋण सुखको, संपदाके अस्तित्वके सुखको और संपदाके भोगसुखको तथा उनके अनित्य स्वभावको विपश्यना साधना द्वारा प्रज्ञासे जान लेता है। फिर शील संपन्न होनेके सुखको भी विपश्यना द्वारा जानकर यह भलीभांति समझ लेता है कि इन दोनोंमें क्या अन्तर है! याने उऋणसुख, संपदासुख, भोगसुख तीनों मिलकर शीलसुखकी १६ वी कलाके बराबर भी नहीं हैं।

रह जाता है। यदि कोई गृहस्थ नासमझीवश अथवा असावधानीवश अपनी कमाई हुई संपदा किसी अन्य व्यक्तिके प्रभुत्वमें दे देता है और परिणाम स्वरूप आवश्यकता पड़ने पर स्वयं अपने परिवारके भरणपोषणके लिए अथवा लोक-कल्याणहित दान देनेके लिए भी उसमेंसे कुछ नहीं प्राप्त कर सकता तो वह भी गृहस्थ जीवनके इस दूसरे सुखसे वंचित रह जाता है।

गृहस्थका तीसरा सुख है -- ऋण-मुक्तिका सुख। यदि कोई गृहस्थ नासमझीसे अथवा परिस्थितियोंसे मजबूर होकर ऋण ले लेता है और ऋणकी अदायगी नहीं कर पाता तो गृहस्थजीवनके तीसरे सुखसे वंचित रह जाता है। ऋणी रहनेका अपना सुख है। ऋणमुक्त होकर ही कोई यह सुख भोग सकता है।

सद्गृहस्थका चौथा सुख है -- शील संपदा। शील पालन। बड़ा सुख है शीलपालनमें। कोई व्यक्ति नासमझी या असावधानीके कारण दुराचारी हो जाता है और हिंसा, चोरी, व्यभिचार, झूठ या मद्यसेवनमेंसे किसी एक या एकसे अधिकका सहारा लेकर अपना शील नष्ट कर देता है तो वह शील--पालनके इस अतुल सुखसे वंचित रह जाता है। ऐसा व्यक्ति जब किसी कल्याणमित्रकी संगति द्वारा धर्म धारण करनेकी कला सीखता है और शीलमें पुष्ट होता है तो इस चौथे सुखका अधिकारी होता है।

गृहस्थके इन चारों सुखोंका उपदेश भगवानने गृहस्थ उपासक सुदत्त अनाथपिंडकको श्रावस्ती के जेतवनमें विहार करते हुए दिया। अनाथपिंडक भगवानका अग्र उपासक शिष्य था। उसने समय-समय पर इन चारों सुखोंको भोगा था।

१ -- उसने अपने श्रमसे धर्मपूर्वक धनसंपदा अर्जित की थी। इसलिए विपुल धनसंपदाका स्वामी होनेका सुख भोगा था।

२ -- इस धर्मपूर्वक स्व-अर्जित संपदाको उसने अपने और अपने परिवारके भरण-पोषणके लिए प्रयोगमें लाकर तथा विपुल दान द्वारा उसका सदुपयोग करके दूसरा सुख भोगा था। एक बार उसके जीवनमें ऐसी स्थितिभी आयी जबकि उसे धनके लिए मोहताज हो जाना पड़ा। उसका कमाया हुआ बहुतसा धन नष्ट हो गया। जो बचा वह ऐसे लोगों के हाथ में था जो उसे लौटा नहीं रहे थे। ऐसी अवस्थामें वह कुछ कालतक दूसरे सुखसे वंचित रहा। परन्तु धर्मके प्रभावसे उसे इस अवस्थासे शीघ्रही छुटकारा मिला और वह शेष जीवनपर्यंत उसका संयमित उपभोग एवं दान देनेमें सदुपयोग कर सका। इस प्रकार गृहस्थ जीवनके इस दूसरे सुखको भोगते रह सका।

३ -- धनहीन होने पर भी उसे किसीका ऋण नहीं चुकाना था। न अधिक, न कम। अतः ऋणमुक्त होनेका सुख उसने सदैव भोगा।

४ -- भगवानके और भगवानके जरिए धर्मके संपर्कमें आनेसे पहले उसने अपना शील-सदाचार भंग किया था। परन्तु विपश्यना धर्म मिलनेके बाद शीलमें पुष्ट हुआ। न शरीरसे, न वाणीसे और न ही मनसे उसने कभी ऐसा दुष्कर्म किया जो कि दोषपूर्ण हो। ऐसे निर्दोष जीवनके सुखको भोगता हुआ वह अपना गृही जीवन सफल बना सका। प्रमादवश जो कभी दुराचरण कर चुका था, अब धर्मसाधना द्वारा उसका निराकरणकर मुक्त हुआ। जैसे कि --

यो च पुब्बे पमज्जित्वा पच्छा सो न पमज्जति।
सो मं लोके पभासेति, अब्भामुत्तो' व चंदिमा॥

जो प्रमादवश गलत काम कर भी चुका हो परन्तु बादमें नहीं करता और दुष्कर्मोंसे छुटकारा पा लेता है, वह मेघमुक्त आकाशमें चंद्रमाकी भांति प्रकाशमान होता है।

यों चारों सुखोंसे सम्पन्न गृहस्थ जब चित्तको एकाग्र करता हुआ, विपश्यनाका अभ्यास करता है तो अन्तर्मुखी होना सीखता है। अन्तर्मुखी होकर भीतर ही भीतर उत्पन्न होनेवाली सुखद-दुखद संवेदनाओंको निर्लिप्त होकर यथाभूत देखना सीखता है। निर्लिप्त होकर देखता है तो संपदाके होने की सुखद संवेदना, उसके उपभोग और सदुपयोग की सुखद संवेदना, ऋणमुक्त होनेकी सुखद संवेदनाको विपश्यना द्वारा अनुभूत करके जब निर्दोष जीवन जीनेकी सुखद संवेदनासे उसकी तुलना करता है तो पाता है कि पहले तीनोंके मुकाबले यह चौथी कई गुना अधिक प्रबल है।

इसलिए गृहस्थ साधको! हम धर्मपूर्वक स्व-अर्जित संपदा, उसका सदुपयोग और ऋणमुक्तिसुखको तो उपलब्ध करें, पर इनसे भी अधिक शील-संपदा संपन्न होनेका सुख उपलब्धकर मेघ-मुक्त चंद्रमाकी भांति प्रकाशमान होकर सही मानेमें मंगल लाभी हों।

मंगल मित्र
स. ना. गो.

इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक	६३	दि. २-७-८०	से	१३-७-८० तक
,,	६४	दि. १३-७-८०	से	२४-७-८० तक
,,	६५	दि. २४-७-८०	से	४-८-८० तक
,,	६६	दि. ४-८-८०	से	१५-८-८० तक
,,	६७	दि. १५-८-८०	से	२६-८-८० तक
,,	६८	दि. २६-८-८०	से	६-९-८० तक
,,	६९	दि. ६-९-८०	से	१७-९-८० तक
,,	७०	दि. १७-९-८०	से	२८-९-८० तक

संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३. (नासिक-महाराष्ट्र) फोन नं. ७६.

सूचना : १) स्वयं शिविर में केवल वे **पुराने साधक** ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का आत्मविश्वास के साथ कड़ाई से पालन कर सकें।

२) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।

३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृति प्राप्त कर लें।

४) स्वयं शिविर में अन्य सभी सुविधायें उपलब्ध रहेंगी।

व्यवस्थापक

साधकोंके उद्‌गार

कोल्हापूर (महाराष्ट्र) के श्री राजाराम बेरीने अपने पत्रमें कुछ सामान्य प्रश्न उठाए हैं जो सभी साधकोंके लिए उपयोगी हो सकते हैं। अतः प्रश्नोत्तर नीचे प्रस्तुत हैं :--

१ – साधनाके दौरान विचार तो मनमें आते ही हैं--कभी चिन्ताओंके, कभी अपने कर्त्तव्यों के संबंधमें, कभी जीवनके किसी अन्य भागपर अथवा किसी ज्वलंत समस्या पर---इनकी अवहेलना कर दें या इन पर गहनतासे चिंतन-मनन करें? मेरी समझमें तो इनमें अधिक रस लेना अथवा दमन करना दोनों ही भूल होगी। इस पर प्रकाश डालनेकी कृपा करें!

- साधना करते समय जो भी विचार आएं उन्हें गौण मानकर उपेक्षा करें। उस समय साधना याने संवेदनाओंके प्रति समता-भाव रखनेको ही प्रमुखता दें। यदि कोई विचारणीय प्रश्न हो उस पर साधनाके पश्चात चिंतन कर सकते हैं।

२ – शरीरके किसी अंगमें संवेदनाओंका निरीक्षण करते समय शरीरके भीतर भी कुछ होता हुआ प्रतीत होता है। क्या इनकी अवहेलना करें? अथवा उस समयकी प्रतीक्षा करें जब वहाँकी संवेदनाएं और प्रत्यक्ष हो जाय?

- संवेदनाओंका निरीक्षण करते समय शरीरकी गहराईमें कोई अनुभूति हो तो थोड़ी देरके लिए रुककर उसकी स्पष्ट जानकारी कर सकते हैं और फिर अपने निश्चित क्रममें लग सकते हैं। बहुत देर तक रुके रह जाएं तो चित्तमें अस्थिरता आनेका खतरा रहता है। अतः उस ओरसे सजग रहें।

३ – विपश्यना वैसे तो शरीर में संवेदनाओंको देखना ही है। पर मान लें कि मुझे किसी समस्याका समाधान करना है। तो क्या मैं सामान्य विपश्यना करनेके पश्चात उसी आसन पर बैठे-बैठे समस्या पर गहराईसे चिंतन कर लूँ? जब मैं ऐसा करता हूँ तो शरीरके किसी अंगमें, साधारणतः सिरमें संवेदनाएँ मालूम होती रहती हैं। तो क्या इन संवेदनाओंको ध्यानपूर्वक गहराईसे देखते हुए संबंधित समस्याके विचारको मनमें आने दें?

- साधनाके पश्चात् किसी समस्या पर चिंतन करनेमें कोई दोष नहीं। उस समय संवेदनाएं मालूम होंगी परन्तु उनकी उपेक्षा कर मूल समस्याके चिंतन-मनन को ही प्राथमिकता दें।

४ – ध्यानमें किसी अंग-विशेष पर संवेदनाओंका निरीक्षण करते-करते किसी नजदीकी अथवा दूरस्थ अंगमें भी संवेदना उठे तो ऐसेमें क्या करना चाहिए?

- साधनाके समय किसी अंग-विशेषका निरीक्षण करते समय अन्य अंगोंमें हो रही संवेदनाकी उपेक्षा करें और उसकी बारी आने पर ही उसे महत्व दें। अन्यथा क्रमवद्ध निरीक्षण कर पाना असंभव हो जायेगा।

५ – कभी जीवनके किसी प्रश्न पर खुली ऑखों विचार-विमर्श करते समय या किसी गंभीर समस्या पर किसीकी बातें सुनते समय सिरमें इतनी तीव्र संवेदनाएं प्रकट होती हैं कि कभी-कभी तो समस्याके स्थान पर उन्हीं पर मन खिंच जाता है। कृपया बताएं कि उस वक्त क्या करें?

- दैनिक जीवनकी जिम्मेदारीका काम करते समय यदि संवेदना महसुस होने लगे तो उसकी उपेक्षा करें और सारा ध्यान काम पूरा करनेमें ही लगाए। इससे कठिनाई दूर होगी और काममें सफलता मिलेगी। मन दोनों ओर रहेगा तो काममें सफलता मिलनेमें कठिनाई होगी।

६ – मुझे शरीरके किसी छोटेसे भाग पर मन एकाग्र करना अधिक आसान प्रतीत होता है। जैसे पूरे कानकी बजाय कानके किसी एक भाग पर। क्या ऐसा करना ठीक है?

- सामान्यतः किसी छोटे भाग पर मन टिकाना कठिन होता है। मन ऊबने लगताहै। परन्तु यदि टिका सकते हों तो अच्छी बात है, अवश्य टिकाए।

समस्त मंगल मैत्री सहित **स. ना. गो.**

★

मेसाचुसेट (अमरेका) की जिन डेविस स्वदेश लौटकर लिखती हैं, "ऐसा लगता है कि मेरे मन और हृदयको अन्ततः अपना घर मिल गया है। धम्मगिरि पर मेरे अनुभव अत्यंत ज्ञानवर्धक रहे हैं। जीवनके उलझे हुए अध्याय सुलझने शुरू हो गए हैं। अन्ततः सारी खोज और भटकन पर विराम लग सका है। जीवन जीनेका असली काम अब आरंभ हुआ है। साधनाके अंतिम दिनों चैत्यके ऊपरी तल्ले पर बैठकर ध्यान करनेका जो मुझे अवसर मिला उससे धर्म-मार्ग-पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़नेका बड़ा बल मिला था। इस असीम कृपाके लिए ससम्मान आभारपूर्वक आपके बहुविधि मंगलके लिए मेरी मंगल मैत्री भेजती हूँ..."

★

बम्बईसे प्रोफेसर बी. एन. जोगलेकर बड़े भावभीने शब्दोंमें लिखते हैं, "इगतपुरीके जिस विपश्यना शिविरमें अभी हमने भाग लिया उसमें समय-समय पर आपके अमूल्य उपदेशों तथा निर्देशोंके लिए आभार प्रकट करनेके लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं।

मुझे ऐसे अनुभवका सौभाग्य प्राप्त हुआ है जो जीवनकी अविस्मरणीय घटनाकी भांति याद रहेगा। जब हम इगतपुरीमें विपश्यना शिविरके लिए आए तो हमारी अपनी आशंकाएं, अविश्वास घर बनाए थे। परन्तु आपके व्यक्तित्वके कोमल स्पर्शसे घबराहट व आशंकाके सारे बादल हट गए और हम बड़े आत्मविश्वासके साथ शिविर पूरा कर सके।

अब सारी जिम्मेदारी अपनी ही है कि "विपश्यना" साधनाका अभ्यास करते-करते हम अपने अज्ञानकी सारी ग्रंथियोंका विमोचन कर लें।..."

आगामी शिविर

Camp. No. 180 Switzerland July 18-28
Contact : Mrs./Mr. Jim & Margrit Shannon, Haldenstrasse, CH 3510 Hautligen, Swiss. Tel. : (031) 002208
Camp. No. 181 MONTRIAL (Canada) July 31-Aug. 10
Contact : Mr. Roger Gosselin, 189, Rue St. Jacques, East Angus, Quebec J0B 1KO, canada. Tel. : (819) 832-2497.
Camp. No. 182 CHICAGO (U. S. A.) Aug. 13-23
Concact : Dr. S. C. Soni, 405, W. Palladium Dr., Joliet, IL 60435. U. S. A. Tel. : 815-744-4678.
Camp. No. 183 MENDOCINO, Calif. (U. S. A.) Aug. 26-Sept. 6.
Contact : Dr. Jacques Tenzel, P. O. Box 1128, Mendocino, Calif. 95490 U.S.A. Tel. : (707) 937-0485.
Camp. No. 184 SYDNEY (Australia) Sept. 14-26.
Contact : Carolyn Walsh, 12, King William St., Greenwich, NSW 2065, Australia. Tel. 43-1568.
Camp. No. 185 PERTH (Australia) Sept. 29-Oct. 9.
Contact : Mr. Doug. Solomon, 116 Marine Pde., Cottesloe, W. A. 6011, Australia. Tel. 09-321-4534.

P. S :- जिन साधकोंके कोई मित्र, परिचित व संबंधी इन उपरोक्त देशोंमें रहते हों, वे उन्हें सम्मिलित होकर लाभान्वित होनेकी सूचना व प्रेरणा दे सकते हैं।

फोन : २३७४६, २७४४७
मेसर्स जे. फूलचन्द एण्ड कं.
१४४, लिंघी चेट्टी स्ट्रीट, मद्रास ६०० ००१.
की मंगल कामनाओं सहित

फोन : नं. ८६५०२, ८११५५७
मेसर्स चेतनदास फतरूचंद
७८६, माउन्ट रोड, मद्रास-६०० ००२.
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

बरसे बरखा समय पर, दूर र वै दुस्काल ।
सासन हूवै धरम रो, लोग हुवै खुसहाल ॥
गृहपति तो कंगलो बुरो, गृहत्यागी धनवान ।
धरम न धारण कर सके, सधै नहीं कल्यान ॥
गृहपति ! तू मत दीन बण, मत तू हाथ पसार ।
अपणै स्रम सूं, धरम सूं, अपणो लोक सुधार ॥
कुसल रीत भरजन करै, कुलपाळक गृहवान ।
खुलै हाथ सूं दान कर, साधै निज कल्यान ॥
गृहपति व्याकुल ही र वै, जद तक रिण रो भार ।
सोवै सुखकी नींद मह, रिण रो बोझ उतार ॥
लोक और परलोक सुख, जो चावै, गृहवान ।
तो पालण कर सील ही, सील धरम सुख खान ॥

दोहे धरम के

निज श्रमबलसे, धरमसे, सम्पद अर्जित होय ।
तो ही गृहपतिके लिए, सुख मंगलमय होय ॥
अर्जित सम्पत्तिका सदा, समुचित हो उपयोग ।
तो गृहपतिका सुख बढ़े, बढ़े नहीं भव-रोग ॥
संग्रह ही संग्रह करे, करे न किंचित् त्याग ।
उस गृहपतिको सुख कहाँ ? जिसका छुटा न राग ॥
परिजनका पालन करे, करे दान उन्मुक्त ।
सदा मुक्त ऋणसे रहे, पावे सुख उपयुक्त ॥
शील धरम पालन करे, दूर होय दुख शोक ।
सदाचारसे सुधरते, लोक और परलोक ॥
सदा शीलमें रत रहे, राखे चित्त अडोल ।
प्रज्ञामें पकता रहे, यही धरम अनमोल ॥

बयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : **रामप्रताप यादव**, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. • मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८८२५१ •
पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २५० /- • वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

"विपश्यना"
पो. रजि. नं. NSK-64

License No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :
बयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)